प्राचीन मालवा के जैन विद्वान और उनकी रचनाएँ

डॉ. तेजसिंह गौड़
उज्जैन (म.प्र.)

मालवा भारतीय इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। साहित्य के सम्बन्ध में भी यह पिछड़ा हुआ नहीं रहा है। कालिदास जैसे कवि इस भूखण्ड की ही देन है। प्राचीन मालवा में जैन-विद्वानों की भी कमी नहीं रही है। प्रस्तुत निबंध में मालवा के सम्बन्धित जैन विद्वानों के संक्षिप्त परिचय के साथ उनकी कृतियों का भी परिचय देने का प्रयास किया जा रहा है। इन विद्वानों के सम्बन्ध में सामग्री यत्र-तत्र बिखरी पड़ी है। साथ ही आज भी जैनधर्म से सम्बन्धित कई ग्रन्थ ऐसे हो सकते हैं और होंगे भी जो प्रकाश में नहीं आए हैं। फिर भी उपलब्ध जानकारी के अनुसार कुछ जैन-विद्वान और उनकी रचनायें निम्नानुसार है :-

१. आचार्य भद्रबाहु :- आचार्य भद्रबाहु का परिचय देने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। कारण कि इन्हें प्राय: अधिकांश व्यक्ति जानते हैं। ये भगवान महावीर के पश्चात् छठे थेर माने जाते हैं। इनके ग्रंथ 'दसाउ' और 'दस निज्जुति' के अतिरिक्त 'कल्पसूत्र' का जैन धार्मिक-साहित्य में विशेष महत्व है।[१]

२. क्षपणक :- ये सम्राट् निक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। इनके रचे हुए न्यायावतार, दर्शनशुद्धि, सम्मतितर्कसूत्र और प्रमेयरत्न कोवा नामक चार ग्रंथ प्रसिद्ध है। इनमें न्यायावतार ग्रंथ अपूर्व है। यह अत्यंत लघु ग्रंथ है, किंतु इसे देख कर सागर में मागर भरने की कहावत याद आ जाती है। ३२ श्लोकों के इस काव्य में क्षपणक ने सारा जैन न्याय शास्त्र भर दिया है। न्यायावतार पर चन्द्रप्रभसूरि ने न्यायावतारनिवृत्ति नामक विशेष टीका लिखी है।[२]

(३) आर्य रक्षितसूरि : आपका जन्म मन्दसौर में हुआ था। पिता का नाम सोमदेव तथा माता का नाम रुद्रसोमा था। लघुभ्राता का नाम फल्गुरक्षित था जो स्वयं भी आर्यरक्षितसूरि के कहने से जैन साधु हो गया था।

इनके पिता सोमदेव स्वयं एक अच्छे विद्वान थे। आर्यरक्षित की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर पिता के संरक्षण में हुई। फिर आगे अध्ययनार्थ ये पाटलीपुत्र चले गये। पाटलीपुत्र से अध्ययन समाप्त कर जब इनका दशपुर आगमन हुआ तो स्वागत के समय माता रुद्रसोमा ने कहा - "आर्यरक्षित तेरे विद्याध्ययन से मुझे तब संतोष एवं प्रसन्नता होती जब तू जैन दर्शन और उसके साथ ही विशेषत: दृष्टिवाद का समग्र अध्ययन कर लेता।" माता की मनोभावना एवं उसके आदेशानुसार आर्यरक्षित इक्षुवाटिका गये जहाँ आचार्य श्री तोसलीपुत्र विराजमान थे। उनसे दीक्षा ग्रहण कर जैन-दर्शन एवं दृष्टिवाद का अध्ययन किया। फिर उज्जैन में अपने गुरु की आज्ञा से आचार्य भद्रगुप्तसूरि एवं दतनंतर आर्य वज्रस्वामी के समीप पहुंचकर उनके अन्तेवासी बनकर विद्याध्ययन किया।

आर्य वज्रस्वामी की मृत्यु के उपरांत आर्यरक्षितसूरि तेरह वर्ष तक युगप्रधान रहे। आपने आगमों को चार भागों में निम्नानुसार विभक्त किया :-

१. करणचरणानुयोग, २. गणितानुयोग, ३. धर्मकथानुयोग और ४. द्रव्यानुयोग। इसके साथ ही आर्यरक्षितसूरि ने अनुयोगद्वार सूत्र की भी रचना की जो जैन-दर्शन का प्रतिपादक महत्वपूर्ण आगम मान जाता है। यह आगम आचार्य प्रवर की दिव्यतम दर्शनिक दृष्टि का परिचायक है।

आर्यरक्षित सूरि का स्वर्गवास दशपुर में वीर संवत् ५८३ में हुआ।[३]

(४) सिद्धसेन दिवाकर : पं. सुखलाल जी ने श्री सिद्धसेन दिवाकर के विषय में इस प्रकार लिखा है - जहाँ तक मैं जान पाया हूँ जैनपरम्परा में तर्क का और तर्कप्रधान संस्कृतवाङ्मय का आदि प्रणेता है सिद्धसेन दिवाकर।[४]" उज्जैन और विक्रम के साथ इनका पर्याप्त सम्बन्ध रहा है। रचनायें (१) 'सम्मति प्रकरण प्राकृत में है और जैनदृष्टि और मंतव्यों को तर्क शैली में स्पष्ट करने तथा स्थापित करने में जैन-वाङ्मय में सर्वप्रथम ग्रन्थ है, जिसका आश्रय उत्तरवर्ती सभी श्वेताम्बर-दिगम्बर-विद्वानों ने लिया है। सिद्धसेन दिवाकर ही जैन-परम्परा का आद्य संस्कृत स्तुतिकार है।[५]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) 'कल्याणमंदिरस्तोत्र' ४४ श्लोकों में है। यह भगवान् पार्श्वनाथ का स्तोत्र है।इसकी कविता में प्रसाद गुण कम और कृत्रिमता एवं श्लेष की अधिक भरमार है। परन्तु प्रतिभा की कमी नहीं है।[६]

(३) वर्धमान द्वात्रिंशिद्वास्तोत्र ३२ श्लोकों में भगवान् महावीर की स्तुति है। इसमें कृत्रिमता एवं श्लेष नहीं है। प्रसादगुण अधिक है।[६]

इन दोनों स्तोत्रोंमें सिद्धसेन दिवाकर की काव्यकला उच्च श्रेणी की पाई जाती है।

(४) तत्त्वार्थाधिगमसूत्र की टीका बड़े बड़े जैनाचार्यों ने की है। इसके रचनाकार को दिगम्बर सम्प्रदाय वाले 'उमा स्वामि' और श्वेताम्बर सम्प्रदाय वाले 'उमास्वाति' बतलाते हैं। इस ग्रंथ की टीका सिद्धसेन दिवाकर ने बड़ी विद्वत्ता के साथ लिखी है।[८]

५. **जिनसेन** - ये पुन्नाट सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा में हुए। ये आदिपुराण के कर्त्ता श्रावक धर्म के अनुयायी एवं पंचस्तूपान्वय के जिनसेन से भिन्न हैं। ये कीर्तिषेण के शिष्य थे।

जिनसेन का 'हरिवंश' इतिहासप्रधान चरितकाव्य श्रेणी का ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की रचना वर्धमानपुर वर्तमान बदनावर जिला धार में की गई थी। दिगम्बरीय सम्प्रदाय के कथासंग्रहों में इसका स्थान तीसरा है।[९]

६. **हरिषेण** : पुन्नाट संघ के अनुयायियों में एक दूसरे आचार्य हरिषेण हुए। इनकी गुरुपरम्परा मौनी भट्टारक श्री हरिषेण, भरतसेन, हरिषेण इस प्रकार बनती है। अपने कथाकोश की रचना इन्होंने वर्धमानपुर या बढवाण - बदनावर में विनायकपाल राजा के शासनकाल में की थी। विनायकपाल प्रतिहार वंश का राजा था। जिसकी राजधानी कन्नौज थी। इसका एक ९८८ वि. सं. का दानपत्र मिला है। इसके एक वर्ष पश्चात् अर्थात् वि.क्र. ९८९, शक संवत् ८५३ में कथाकोश साढ़े बारह हजार श्लोक परिमाण का वृहद् ग्रन्थ है।[१०] यह संस्कृतपद्यों में रचा गया है और उपलब्ध समस्त कथाकोशों में प्राचीनतम सिद्ध होता है। इसमें १५७ कथायें हैं। जिनमें चाणक्य, शकराज, भद्रबाहु वररुचि, स्वामी कार्तिकेय आदि ऐतिहासिक पुरुषों के चरित्र भी हैं। इस कथाकोश के अनुसार भद्रबाहु उज्जयिनी के समीप भाद्रपद में ही रह रहे थे और उनके दीक्षित शिष्य राजा चन्द्रगुप्त, अपरनाम विशाखाचार्य, संघ सहित दक्षिण के पुन्नाट देश को गये थे। कथाओं में कुछ नाम व शब्द जैसे मेदज्ज (मेतार्य), विज्जदाढ़ (विद्युदंष्ट्र) प्राकृत रूप में प्रयुक्त हुए हैं जिससे अनुमान होता है कि रचयिता कथाओं को किसी प्राकृत-कृति के आधार पर लिख रहा है। उन्होंने स्वयं अपने कथाकोश को आराधनोधृत कहा है, जिससे अनुमानतः भगवताआराधना का अनुमान होता है।[११]

७. **मानतुंग** : इनके जीवन के सम्बन्ध में अनेक विरोधी विचार धाराएँ हैं। इनका समय सातवीं या आठवीं शताब्दी के लगभग माना जाता है।

रचनायें - इन्होंने मयूर और बाण के समान स्तोत्र-काव्य का प्रणयन किया। इनके भक्ताभरस्तोत्र का श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही सम्प्रदायवाले समान रूप से आदर करते हैं। कवि की यह रचना इतनी लोकप्रिय रही कि इसके प्रत्येक अन्तिम चरण को लेकर समस्यापूर्त्यात्मक स्तोत्रकाव्य लिखे जाते रहे। इस स्तोत्र की कई समस्यापूर्तियाँ उपलब्ध है[१२]

(८) **आचार्य देवसेन** :- मार्गशीर्ष शुक्ला १० वि. सं. ९९० को धारा में निवास करते हुए पार्श्वनाथ के मंदिर में इन्होंने अपना ग्रन्थ 'दर्शनसार' समाप्त किया।[१३] इन्होंने 'आराधनासार' और 'तत्त्वसार' नामक ग्रन्थ भी लिखे हैं। 'आलापपद्धति' और 'नयचक्र' आदि रचनायें आपने धारा में ही लिखीं अथवा अन्यत्र यह रचनाओं से ज्ञात नहीं होता। स्याद्वाद और नयवाद का स्वरूप समझने के लिए देवसेन की रचनायें बहुत उपयोगी हैं।[१४]

(९) **आचार्य महासेन** :- ये लाड़बागड़ संघ के पूर्णचन्द्र थे। आचार्य जयसेन के प्रशिष्य और गुणाकरसेनसूरि के शिष्य थे। इन्होंने 'प्रद्युम्नचरित' की रचना ११ वीं शताब्दी के मध्य भाग में की ये मुंज के दरबार में थे तथा मुंज द्वारा पूजित थे। न तो इनकी कृति में ही रचनाकाल दिया हुआ है और न ही अन्य रचनाओं की जानकारी मिलती है।

(१०) **अमितगति** :- आचार्य अमितगति द्वितीय माथुरसंघ के आचार्य थे जो माधवनसेनसूरि के शिष्य और नेमिषेण के प्रशिष्य थे। अमितगति वाक्पतिराज मुंज की सभा के रत्न थे। ये बहुश्रुत विद्वान थे। इनकी रचनाएँ विविध विषयों पर उपलब्ध हैं। इनकी रचनाओं में एक पंचसंग्रह वि.सं. १०७३ में मसूतिकापूर वर्तमान मसूद बिलोदा, जो धार के समीप है, बनाया गया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन सब उल्लेखों से सुनिश्चित है कि अमितगति धारा नगरी और उसके आसपास के स्थानों में रहे थे। उन्होंने प्रायः अपनी सभी रचनायें धारा में या उसके समीपवर्ती नगरों में लिखीं। बहुत संभव है कि आचार्य अमितगति के गुरुजन धारा या उसके समीपवर्ती स्थानों में रहे हों। अमितगति ने सं. १०५० से १०७३ तक २३ वर्ष के काल में अनेक ग्रंथों की रचना वहाँ की थी।[१५]

कीथ[१६] के अनुसार अमितगति क्षेमेन्द्र से अर्धशताब्दी पहले हुए थे। उनके 'सुभाषितरत्नसंदोह' की रचना ९९४ वि.सं. में हुई थी और उनकी धर्मपरीक्षा बीस वर्ष के अनन्तर लिखी गई।

१. सुभाषितरत्नसंदोह में ३२ परिच्छेद हैं जिनमें प्रत्येक में साधारणतः एक ही छन्द का प्रयोग किया गया है। इसमें जैन नीतिशास्त्र के विभिन्न दृष्टिकोणों का आपाततः विचार किया गया है, साथ साथ ब्राह्मणों के विचार और आचार के प्रति इसकी प्रवृत्ति विसंवादात्मक है। प्रचलित रीति के अनुसार स्त्रियों पर खूब आक्षेप किये गये है और एक पूरा परिच्छेद वेश्याओं के सम्बन्ध में है। जैनधर्म के आप्तों का वर्णन २८ वें परिच्छेद में किया गया है। ब्राह्मणधर्म के विषय में कहा गया है कि वे उक्त आप्तजनों की समानता नहीं कर सकते, क्योंकि वे स्त्रियों के पीछे कामातुर रहते हैं; मद्यसेवन करते हैं और इन्द्रियासक्त होते हैं।

२. धर्मपरीक्षा : इसमें भी ब्राह्मण धर्म पर आक्षेप किये गये हैं और इससे अधिक आख्यानमूलक साक्ष्य की सहायता ली गई है।

३. पंञ्चसंग्रह के सम्बन्ध में ऊपर उल्लेख हो चुका है।

४. उपासकाचार ; ५. आराधनासामायिकपाठ ६. भावनाद्वात्रिंशतिका, ७. योगसार (प्राकृत)आदि रचनायें अमितगति द्वारा लिखी गईं। इसके अतिरिक्त उनकी निम्नलिखित रचनाएं आज उपलब्ध नहीं है:- १. जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति २. चन्द्रप्रज्ञप्ति ३. सार्धद्वयद्वीप प्रज्ञप्ति और ४. व्याख्याप्रज्ञप्ति ।

अमितगति बहुमुखी प्रतिभा के विद्वान थे। जैनधर्म के अतिरिक्त संस्कृत के क्षेत्र में भी उनका ऊँचा स्थान माना जाता है। वि.सं. ९५३ में माथुरों के गुरु रामसेन ने काष्ठा संघ की एक शाखा मथुरा में माथुर-संघ का निर्माण किया था। अमित-गति इसी माथुर संघ का निर्माण किया था। अमितगति इसी माथुर संघ के अनुयायी थे। अमितगति की गुरु-परम्परा-वीरसेन-देवसेन-अमितगति(प्रथम) नेमिषेण - माधवसेन - अमितगति(द्वितीय) और शिष्यपरम्परा- शांतिषेण-अमरसेन - श्रीषेण-चन्द्रकीर्ति-अमरकीर्ति इस प्रकार रही है।[२६]

११. माणिक्यनन्दी :- ये धारा निवासी थे और वहाँ दर्शन शास्त्र का अध्ययन करते थे। इनकी एक मात्र रचना परीक्षामुख नामक एक न्यायसूत्र ग्रन्थ है। जिसमें कुल २०७ सूत्र है। ये सूत्र सरल सरस और गम्भीर अर्थ द्योतक है। माणिक्यनन्दी ने आचार्य अकलंक देव के वचनसमुद्र का दोहन करके जो न्यायामृत निकाला वह उनकी दार्शनिक प्रतिभा का द्योतक है।[१८]

१२. नयनन्दी : ये माणिक्यनन्दी के शिष्य थे। इनके द्वारा रचित 'सुदर्शनचरित्र' एक खण्डकाव्य है जो महाकाव्यों की श्रेणी में रखने योग्य है। इसकी रचना वि.सं. ११०० में हुई।[१९] सकल विहिविहाण इनकी दूसरी रचना है जो एक विशाल काव्य है। इसकी प्रशस्ति में इतिहास की महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की गई है। उसमें कवि ने ग्रन्थ बनाने के प्रेरक हरिसिंह मुनि का उल्लेख करते हुए अपने से पूर्ववर्ती जैन-जैनेतर और कुछ समसामयिक विद्वानों का भी उल्लेख किया है। समसामयिक विद्वानों में श्रीचन्द्र, प्रभाचन्द्र, श्रीकुमार का उल्लेख किया है।[२०] राजा भोज ने हरिसिंह के नामों के साथ बच्छराज और प्रभु ईश्वर का भी उल्लेख किया है जिसने दुर्लभ प्रतिमाओं का निर्माण कराया था। यह ग्रन्थ इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्व का है। कवि के दोनों ग्रन्थ अपभ्रंश भाषा में है। इसका रचना काल वि.सं. ११०० है।[२१]

(१३) प्रभाचन्द्र :- ये माणिक्यनदी के विद्याशिष्यों में प्रमुख रहे हैं। ये उनके परीक्षामुख नामक सूत्रग्रंथ के कुशल टीकाकार भी हैं और दर्शनसाहित्य के अतिरिक्त वे सिद्धान्त के भी विद्वान थे। आचार्य प्रभाचन्द्र ने धारा नगरी में रहते हुए केवल दर्शन शास्त्र का ही अध्ययन नहीं किया, प्रत्युत्त धाराधिप भोज से प्रतिष्ठा पाकर अपनी विद्वत्ता का विकास भी किया। साथ ही विशाल दार्शनिक ग्रन्थों के निर्माण के साथ अनेक ग्रन्थों की रचना की।[२२] इनके द्वारा रचित ग्रन्थों के नाम इस प्रकार है-

१. प्रमेयकमलमार्तण्ड - यह दर्शनग्रन्थ है जो माणिक्य नन्दी के परीक्षामुख ग्रन्थ की टीका है। यह ग्रन्थ राजा भोज के समय रचा गया था।[२३]

२. न्यायकुमुदचन्द्र - यह जैनन्याय का प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है।[२४]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. आराधनाकथाकोश - इसमें चन्द्रगुप्त के अतिरिक्त समन्तभद्र और अकलंक के चरित्र भी वर्णित हैं।[२५]

४. पुष्पदन्त के महापुराण पर टिप्पण ५. समाधितंत्रटीका, ६. प्रवचनसरोजभास्कर ७. पंचास्तिकायप्रदीप, ८. आत्मानुशासनतिलक, ९. क्रियाकलापटीका, १०. रत्नकरण्ड-टीका, ११. वृहत्स्वयम्भूस्तोत्रटीका १२. शब्दाम्भोजटीका। इनके रचनाकाल के सम्बन्ध में जानकारी नहीं मिलती है। प्रभाचन्द्र का समय विक्रम की ग्यारहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध और बारहवीं शताब्दी का पूर्वार्ध होना चाहिये।[२६]

इन्होंने देवनन्दी की तत्त्वार्थवृत्ति के विषम पदों का एक विवरणात्मक टिप्पण लिखा। इनके नाम से अष्टपाहुड पञ्जिका, मूलाचारटीका, आराधनाटीका, आदि ग्रन्थों का भी उल्लेख मिलता है, जो उपलब्ध नहीं हैं।

१४. आशाधर :- पंडित आशाधर संस्कृत-साहित्य के अपारदर्शी विद्वान थे। ये मांडलगढ़ के मूलनिवासी थे किन्तु मेवाड़ पर मुसलमान बादशाह शहाबुद्दीन गौरी के आक्रमणों से त्रस्त होकर मालवा की राजधानी धारानगरी में अपनी स्वयं एवं परिवार की रक्षा के निमित्त अन्य लोगों के साथ आकर बस गये थे। पं. आशाधर बघेरवाल जाति के श्रावक थे। इनके पिता का नाम सल्लक्षण एवं माता का नाम श्री रत्नी था। सरस्वती नामक इनकी पत्नी थी- जो बहुत सुशील एवं सुशिक्षिता थी। इनके एक पुत्र भी था, जिसका नाम छाहड़ था। इनका जन्म किस संवत् में हुआ यह तो निश्चितरूप से नहीं कहा जा सकता किंतु ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर इनका जन्म वि.सं. १२३४-३५ के लगभग अनुमानित है।[२६] ये नालछा (धार-जिला)में ३५ वर्ष तक रहे और अपनी साहित्यिक गतिविधियों का केन्द्र बनाया। इनकी रचनाओं का विवरण इस प्रकार है-

१. **सागरधर्मामृत** - सप्त व्यसनों के अतिचार का वर्णन। श्रावक की दिनचर्चा और साधक की समाधिव्यवस्था आदि इसकेवर्ण्य विषय हैं।[२८] रचनासमाप्ति का समय वि.सं. १२९६ है।[२९]

२. **प्रमेयरत्नाकर** - यह स्याद्वाद विद्या की प्रतिष्ठापना करने वाला ग्रन्थ है।[३१]

३. **भरतेश्वराभ्युदय** - इसमें भारत के ऐश्वर्य का वर्णन है। इसे सिद्धचक्र भी कहते है, क्योंकि इसके प्रत्येक सर्ग के अंत में सिद्ध पद आया है।[३१]

४. **ज्ञानदीपिका** ५. **राजमतिविप्रलम्भ** - खण्डकाव्य

६. **अध्यात्मरहस्य** - (योगसार) - इसमें ७२ संस्कृत श्लोकों द्वारा आत्मशुद्धि, आत्मदर्शन एवं अनुभूति के योग की भूमिका का प्ररूपण किया गया है।

७. मूलाराधनाटीका ८. इष्टोपदेशटीका ९. भूपालचतुर्विंशतिकाटीका १०. आराधनासारटीका ११. अमरकोशटीका १२.क्रियाकलाप - व्याकरणग्रन्थ १३. काव्यालंकारटीका - अलंकारग्रन्थ १४. सहस्त्रनामस्तवनसटीक, १५. जिनयज्ञ कल्पसटीक - इसका दूसरा नाम प्रतिष्ठासारोद्धार धर्मामृत का एक अंग है। १६. त्रिषष्टि - स्मृतिशास्त्रसटीक १७. नित्य महोद्योतअभिषेकपाठस्नानशास्त्र १८. रत्नत्रयविधान, १९. अष्टांगहृदयीद्योतिनीटीका-वाग्भट के आयुर्वेदग्रन्थ अष्टांग हृदयी की टीका, २०. धर्मामृत मूल, २१ भव्यकुमुदचन्द्रिका - धर्मामृत पर लिखी गई टीका।

आशाधर काव्य, न्याय, व्याकरण, शब्दकोश, अलंकार, धर्मशास्त्र योगशास्त्र, स्तोत्र और वैद्यक आदि सभी विषयों में असाधारण थे।

१५. श्रीचन्द्र : ये धारा के निवासी थे। लाड़बागड़ संघ और बलात्कारगण के आचार्य थे। इनके ग्रन्थ इस प्रकार हैं -१. रविषेण कृत पद्मपुराण पर टिप्पण। २. पुराणसार ३. पुष्पदन्त के महापुराण पर टिप्पण ४. शिवकोटि की भगवती-आराधना पर टिप्पण। पुराणसार सं. १०८० में पद्मचरित की टीका वि.सं. १०८७ में उत्तर पुराण का टिप्पण वि.सं. १०८० में राजा भोज के समय रचा। टीकाप्रशस्तियों में श्रीचन्द्र ने सागर सेन और प्रवचनसेन नामक दो सैद्धांतिक विद्वानों का उल्लेख किया है जो धारा के निवासी थे। इससे स्पष्ट विदित होता है कि उस समय धारा में अनेक जैन-विद्वान और आचार्य निवास करते थे[३३]। इनके गुरु का नाम श्रीनन्दी का।

१६. कवि दामोदर :- वि.सं. १२८७ में ये गुर्जर देश से मालवा में आये और मालवा के सल्लखणपुर को देखकर संतुष्ट हो गये। ये मेड़ेत्तम वंश के थे। पिता का नाम कवि माल्हण था जिसने दल्ह का चरित्र बनाया था। कवि के ज्येष्ठ भ्राता का नाम जिन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देव था। कवि दामोदर ने सल्लखणपुर में रहते हुए पृथ्वीधर के पुत्र रामचन्द्र के उपदेश एवं आदेश से तथा मल्हपुत्र नागदेव के अनुरोध से नेमिनाथ चरित्र वि.सं. १८७ में परमार वंशीय राजा देवपाल के शासन काल में बनाकर समाप्त किया।

१७. **भट्टारक श्रुतकीर्ति** - ये नदी संघ बलात्कारगण और सरस्वतीगच्छ के विद्वान थे। ये त्रिभुवनमूर्ति के शिष्य थे। अपभ्रंश भाषा के विद्वान थे। आपकी उपलब्ध सभी रचनायें अपभ्रंश भाषा के पद्धडिया छन्द में रची गई हैं। चार रचनायें उपलब्ध हैं-

१. **हरिवंशपुराण** - जेरहट नगर के नेमिनाथ चैत्यालय में सं. १५५२ माघ कृष्णा पंचमी सोमवार के दिन हस्तनक्षत्र के समय इसे पूर्ण किया।

२. **धर्मपरीक्षा** - इस ग्रन्थ को भी सं. १५५२ में रचा। क्योंकि इसके रचे जाने का उल्लेख अपने दूसरे ग्रन्थ परमेष्ठि प्रकाशसार में किया है।

३. **परमेष्ठिप्रकाशसार** - इसकी रचना वि.सं. १५५३ की गुरुपंचमी के दिन मांडवगढ़ के दुर्ग और जेरहट नगर के नेमिश्वर जिनालय में हुई।

४. **योगसार** - यह ग्रन्थ सं. १५५२ मार्गशीर्ष महीने के शुक्ल पक्ष में रचा गया। इसमें गृहस्थोपयोगी सैद्धांतिक बातों पर प्रकाश डाला गया है। साथ में कुछ मुनिचर्या आदि का भी उल्लेख किया गया है।

१८. **कवि धनपाल** - ये मूलतः ब्राह्मण थे। लघु भ्राता से जैन धर्म में दीक्षित हुए। पिता का नाम सर्व देव था। वाक्पतिराज मुंज की विद्वत् सभा के रत्न थे। मुंज द्वारा इन्हें सरस्वती की उपाधि दी गई थी। संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओं पर इनका समान अधिकार था। मुंज के सभासद होने से इनका समय ११ वीं शताब्दी में निश्चित होता है।

इन्होंने अनेक ग्रन्थ लिखे जो इस प्रकार हैं -

१. **पाइअ लच्छी नाम माला** - इसकी प्रशस्ति के अनुसार कर्त्ता ने अपनी भगिनी सुन्दरी के लिए धारा नगरी में वि.सं. १०२९ में लिखी थी, जबकि मालवनरेन्द्र द्वारा वि.सं.१०२९ में मान्यखेट लूटा गया था। यह घटना ऐतिहासिक प्रमाणों से भी सिद्ध होती है। धारा नरेश हर्षदेव ने एक शिलालेख में उल्लेख किया है कि उसने राष्ट्र कूट राजा खोट्टिगदेव की लक्ष्मी का अपहरण किया था। इस कोश में अमरकोश की रीति से प्राकृत-पद्यों में लगभग एक हजार प्राकृत शब्दों के पर्यायवाची शब्द कोई २५० गाथाओं में दिये हैं। प्रारम्भ में कमलासनादि अठारह नाम-पर्याय एक एक गाथा में, फिर लोकाग्र आदि १६७ तक नाम आधी-आधी गाथा में, तत्पश्चात्, ५९७ तक एक-एक चरण में और शेष छिन्न अर्थात् एक गाथा में कहीं चार कहीं पाँच और कहीं छह नाम दिये गये हैं। ग्रन्थ के ये ही चार परिच्छेद कहे जा सकते हैं। अधिकांश नाम और उनके पर्याय तद्भव हैं। सच्चे देशी शब्द अधिक से अधिक पञ्चमांस होंगे।[३४]

२. **तिलकमंजरी** - यह गद्यकाव्य है और इसकी भाषा बड़ी ओजस्विनी है।[३५]

३. अपने छोटे भाई शोभनमुनिकृत स्तोत्र ग्रन्थ पर एक संस्कृत-टीका।

४. ऋषभपंचाशिका ५. महावीरस्तुति ६. सत्यपुरीय ७. महावीरउत्साह-अपभ्रंश और ८. वीरथुई इनकी कृतियां है।

१९. **कवि वीर** - ये अपभ्रंश भाषा के कवि थे। इनके द्वारा रचित वरांगचरित, शांतिनाथचरित, सुद्धय वीर अम्बादेवी राय और जम्बूसामिचरिउ का पता चलता है। किंतु इनकी प्रथम चार रचनाओं में से आज एक भी उपलब्ध नहीं है। पाँचवी कृति 'जम्बूसामिचरिउ' की अंतिम प्रशस्ति के अनुसार वि. सं. १०७६ में माघ शुक्ला दसवीं को लिखी गई। कवि ने ११ संधियों में चम्बूस्वामी का चरित्र-चित्रण किया है। वीर के जम्बूसामिचरित्र में ११ वीं सदी के मालवा का लोकजीवन सुरक्षित है। वीर के साहित्य का महत्त्व मालवा की भौगोलिक, आर्थिक, राजनैतिक और लोकसंस्कृति की दृष्टि से तो है ही परन्तु सर्वाधिक महत्त्व मालवी भाषा की दृष्टि से है। मालवी शब्दावली का विकास 'वीर' की भाषा में खोजा जा सकता है।

२०. **मेरुतुंगाचार्य** - इन्होंने अपना प्रसिद्ध ऐतिहासिक सामग्री से परिपूर्ण ग्रन्थ प्रबंध चिंतामणि वि.सं. १३६१ में लिखा। इसमें पाँच सर्ग हैं। इसके अतिरिक्त विचारश्रेणी स्थविरावली और महापुरुषचरित या उपदेशशती जिसमें ऋषभ देव, शांतिनाथ नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और वर्धमान महावीर तीर्थंकरों के विषय में जानकारी है, की रचना की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. तारण स्वामी - ये तारण-पंथ के प्रवर्तक आचार्य थे। इनका जन्म पुहुपावती नगरी में सन् १४४८ में हुआ था। इनके पिता का नाम राढा साव था। वे दिल्ली के बादशाह बहलोल लोदी के दरबार में किसी पद पर कार्य कर रहे थे। आपकी शिक्षा श्री श्रुतसागर मुनि के पास हुई। इन्होंने चौदह ग्रन्थों की रचना की, जिनके नाम इस प्रकार हैं-

१. श्रावकाचार २. मालाजी ३. पंडितपूजा ४. कलम - बत्तीसी, ५. न्यायसमुच्चयसार ६. उपदेशशुद्धसार ७. त्रियंगी सार, ८. चौबीस ठाणा ९. ममलपाहु, १०. सुन्नस्वभाव ११. सिद्धस्वभाव १२. रवात का विशेष १३. छद्मस्थ वाणी और १४. नाम माला।

२२. मंत्रीमंडन : यह झांझण का प्रपौत्र और बाहड़ का पुत्र था। यह बहुमुखी प्रतिभावान था। मालवा के सुलतान होशंग गौरी का प्रधानमंत्री था। इसके द्वारा लिखे गये ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है

१. काव्यमंडन - इसमें पांडवों की कथा का वर्णन है।

२. शृंगार मंडन - यह शृंगार रस का ग्रन्थ है। इसमें १०८ श्लोक हैं ।

३. सारस्वतमंडन - यह सारस्वत व्याकरण पर लिखा गया ग्रन्थ है। इसमें ३५०० श्लोक हैं।

४. कादम्बरीमंडन - यह कादम्बरी का संक्षिप्तीकरण है जो सुलतान को सुनाया गया था। इस ग्रन्थ की रचना सं. १५०४ में हुई थी।

५. चम्पूमंडन - यह ग्रन्थ पांडव और द्रौपदी के कथानक पर आधारित जैनसंस्करण है। रचना-तिथि सं. १५०४ है।

६. चन्द्रविजयप्रबंध - इस ग्रन्थ की रचना-तिथि सं. १५०४ है। इसमें चन्द्रमा की कलाएँ, सूर्य के साथ युद्ध और चन्द्रमा की विजय आदि का वर्णन है।

७. अलंकारमंडन - यह साहित्यशास्त्र का पाँच परिच्छेद में लिखित ग्रन्थ है। काव्य के लक्षण, भेद और रीति, काव्य के दोष और गुण, रस और अलंकार आदि का इसमें वर्णन है। इसकी रचनातिथि भी सं. १५०४ है।

८. उपसर्गमंडन - यह व्याकरण-रचना पर लिखित ग्रन्थ है।

९. संगतिमंडन - यह संगति से सम्बन्धित ग्रन्थ है।

१०. कविकल्पद्रुमस्कन्ध - इस ग्रन्थ का उल्लेख मंडन के नाम से लिखे ग्रन्थ के रूप में पाया जाता है।[३६]

२३. धनदराज - यह मंडन का चचेरा भाई था। इसने शतकमय (नीति, शृंगार और वैराग्य) की रचना की। नीतिशतक की प्रशस्ति से विदित होता है कि ग्रन्थ उसने मंडपदुर्ग में सं. १४९० में लिखे।

आगे और विस्तार में न जाते हुए इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि मालवा में जैन-विद्वानों की कमी नहीं रही है। यदि इस दिशा में और भी अनुसंधान किया जाए तो जैन-विद्वानों और उनकी रचनाओं पर एक अच्छा ग्रन्थ तैयार हो सकता है। विश्वास है कि इस ओर ध्यान दिया जायेगा।

सन्दर्भ

१. संस्कृति-केन्द्र उज्जयिनी (पृष्ठ ११२-११४) में विस्तृत विवरण है।
२. उज्जयिनी - दर्शन, पृष्ठ ९३
३. विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य (क) श्री राजेन्द्र सूरि स्मारक ग्रन्थ, पृ. ४५२ से ४५९ (ख) श्री पट्टावली पराग संग्रह, पृ १३६
४. स्व. बाबू श्री बहादुरसिंह जी सिंधी स्मृति ग्रन्थ, पृ. १०
5. The Jain Sources of the History of Ancient India. Page 150-151
६. संस्कृति-केन्द्र उज्जयिनी, पृ. ११८
७. वही, पृ. ११८
८. . वही, पृ. ११६
9. The Jain sources of the History of India, Page 195 andonward.
१०. संस्कृत साहित्य का इतिहास गैरोला पृ. ३५१-३५२
११. भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान, पृ. ११६
१२. अनेकान्त, वर्ष १८ किरण ६, पृ. २४२ एवं आगे
१३. गुरू गोपालदास वरैया स्मृति ग्रन्थ, पृष्ठ ५४४
१४. भारतीय संस्कृति में जैनधर्म का योगदान, पृ. ८६
१५. गुरु गोपाल दास वरैया स्मृति ग्रन्थ, पृष्ठ ५४५
१६. संस्कृत साहित्य का इतिहास, भाग - २, पृ. २८६-८७, अनुवादक-मंगल देव शास्त्री
१७. संस्कृत साहित्य का इतिहास, भाग-२, पृष्ठ ३४४-४५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. गुरु गोपाल दास वरैया स्मृतिग्रन्थ, पृ. ५४६
१९. भारतीय संस्कृति में जैनधर्म का योगदान, पृ. १६३
२०. गुरुगोपाल दास वरैया स्मृति-ग्रन्थ, पृ. ५४६-४८
२१. भारतीय संस्कृति में जैनधर्म का योगदान, पृ. ६४
२२. गुरु गोपाल दास वरैया स्मृति ग्रन्थ, पृ. ५४८ एवं आगे
२३. वही, पृ. ५४८
२४. भारतीय संस्कृति में जैनधर्म का योगदान, पृ. ८९
२५. वही, पृ. १६८
२६. गुरु गोपालदास वरैया स्मृतिग्रन्थ, पृ. ५५०
२७. अनेकान्त, वर्ष १६ किरण २ जून १९६४, पृ. ५५०
२८. संस्कृत साहित्य का इतिहास गैरोला, पृ. ३४६
२९. भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान, पृ. ११४
३०. वीरवाणी, वर्ष १८, अंक १३, पृ. २१
३१. वही, पृ. २१-२२
३२. संस्कृत साहित्य का इतिहास, गैरोला, पृ. ३४६
३३. गुरु गोपाल दास वरैया स्मृतिग्रन्थ, पृष्ठ ५४६
३४. भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान, पृ. १९५-९६
३५. वही, पृ. १६४
३६. मंत्री-मंडन से सम्बन्धित अधिक जानकारी के लिए देखें - (क) जैन साहित्य नो इतिहास, मो.क. देसाई (ख) The Jain Antiquary, Vols IX No. II of 1943 & XI No. 2 of 1946

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org